इकाई 7 भारतीय दर्शन और पर्यावरण

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 प्रकृति की संकल्पना

7.3 मौखिक परम्पराओं में पर्यावरण

7.4 दार्शनिक ग्रथों में पर्यावरण

7.5 पर्यावरण और शास्त्रीय कला

7.6 दर्शन और संस्कृति : पर्यावरणीय अनुकूलन

7.7 सारांश

7.8 शब्दावली

7.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.0 उद्देश्य

पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा पश्चिम से उधार नहीं ली गई है बल्कि यह युगों से भारतीय जीवन शैली का अंग रहा है। इस इकाई को पढ़ कर आप :

- भारतीय दर्शन में विश्लेषित पर्यावरण की अवधारणा से परिचित हो सकेंगे,
- भारतीय जीवन शैली में प्रकृति के साहचर्य को जान सकेंगे,
- पर्यावरणोन्मुख दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करने में शास्त्रीय कलाओं का महत्व रेखांकित कर सकेंगे, और
- अपने दैनिक जीवन में पर्यावरण के साथ साहचर्य स्थापित कर सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हमारा उद्देश्य भारतीय दर्शन में व्यक्त पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति संवेदनशीलता और समृद्धि से आपको परिचित कराना है। प्राचीन अतीत से भारतीय दर्शन ने पर्यावरण उन्मुख जीवन का समर्थन किया है। वह पर्यावरण के साथ मानव के सहभागी जीवन को महत्व देता है। पर्यावरण के तत्वों द्वारा ही उनकी समष्टि होती है और अंतत: वे पर्यावरण में ही विलीन हो जाते हैं।

7.2 प्रकृति की संकल्पना

भारतीय चिंतन में पर्यावरण की कल्पना किसी भौतिक निर्जीव तत्व के रूप में नहीं की गई है–यह एक जीवित संसार है और मानव बहुत से जीवित प्राणियों में से एक है। यहां प्रकृति की बृहत समष्टि को समझने के लिए निरंतर प्रयास किया गया है। यहां मानव और गैर-मानव संसार के मध्य आपसी आदान-प्रदान और सामंजस्य को विशेष महत्व दिया गया है और इसे जीवन का महत्वपूर्ण निर्देशक सिद्धांत माना गया है।

भारतीय दार्शनिकों के अनुसार बुद्धि सम्पन्न होने के कारण पर्यावरण की सुरक्षा मनुष्य का मूल कर्तव्य है। इस प्रयास में पर्यावरण की कोमलता का भी ध्यान रखना चाहिए।

ये आदिकालिक ब्रह्माण्डीय दृष्टिकोण दो विभिन्न किंतु सम्बद्ध परम्पराओं में पूर्णत: समाविष्ट हैं– मौखिक एवं शाब्दिक। मौखिक परम्परा अधिकतर व्यवहार पर आधारित है जबकि शाब्दिक परम्परा विश्व का सम्पूर्ण और व्यवस्थित विश्लेषण प्रस्तुत करती है।

भारतीय शाब्दिक परम्परा कल्पना करती है कि मनुष्य शेष भौतिक विश्व के समान ऐसे तत्वों का बना हुआ है जो मृत्यु के पश्चात विघटित होकर प्रकृति में विलीन हो जाते हैं। सामान्यत: नौ तत्व होते हैं; पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, गगन, समय, दिशा, मस्तिष्क और मृदा। भारतीय पुराणों के अनुसार तत्वों की उत्पति कई चरणों में होती है। जल, पृथ्वी और आकाश पहले आते हैं ; समुद्री जीव और पक्षी दूसरी पंक्ति में आते हैं, पर भूमि का स्थान तीसरा होता है , वायु का स्थान इसके बाद आता है और अग्नि का आगमन अंत में होता है।

भारतीय चिंतन स्पष्ट करता है कि पर्यावरण एक प्रदत्त अस्तित्व है, प्रकृति में उत्कष्ट है। वह अनुभव करता है कि समस्त प्रकार के जैविक या अ-जैविक पदार्थों में प्राण है। परस्पर सहयोग और निर्भरता पर विशेष बल दिया गया है और माना गया है कि मनुष्य का अकेले रहना संभव नहीं है। यह माना गया है कि पर्यावरण से मित्रतापूर्ण व्यवहार रखने से वह सबकी जरूरतें पूरी कर सकता है। वन में निवास करना बहुत अच्छा समझा जाता था जहाँ कोई भी पर्यावरण को उसके अति शुद्ध रूप में अनुभव कर सकता है। नगरीय केंद्रों में जो अप्राकृतिक और मानव निर्मित में रहने को दूसरा स्थान प्राप्त था। यह कल्पना की गई है कि पर्यावरण के साथ सामंजस्य बनाए रखने पर प्रकृति हर एक की आश्यकताओं को पूरा कर सकती है।

कुरान प्रकृति को अक्सर एक ऐसी भारतीय पुस्तक कहता है जो स्वयं कुरान का सूक्ष्म ब्रह्माण्डीय प्रतिरूप है। 18वीं शताब्दी के सूफ़ी विद्वान अज़ीज़ अल नसफ़ी प्रकृति की कुरान से तुलना करते हुए कहते है कि प्रकृति का प्रत्येक वर्ग कुरान की प्रत्येक सुराह, प्रत्येक जाति उसकी आयत और प्रत्येक प्राणी उसके एक अक्षर के समान है (एस. एच. नस्त्र, ऐन इन्ट्रोडक्शन टू इस्लामिक कॉस्मॉलॉजिकल डॉक्ट्रीन, थेम्स एण्ड हडसन 1798)

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि भारतीय दार्शनिक विचार के अनुसार प्रकृति बहुत से सजीव और निर्जीव तत्वों की जटिल अन्त: क्रिया का एक समूह है।

7.3 मौखिक परम्पराओं में पर्यावरण

मौखिक परम्पराओं से ज्ञान के अशास्त्रीय रूप का पता चलता है। उनसे हमें उन समाजों को समझने का अवसर भी मिलता है जिनके बारे में पर्याप्त लिखित सामग्री प्राप्त नहीं है। दिन प्रतिदिन के मानव वार्तालाप में आदिकाल के समाज की झांकियां मिलती हैं।

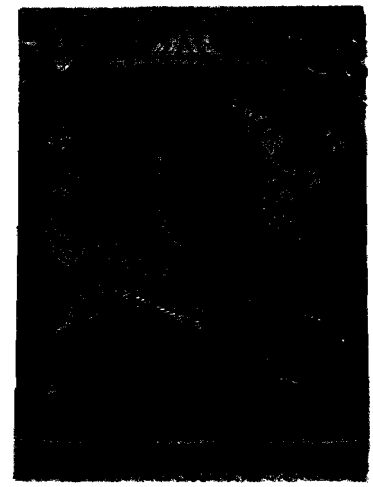

यदि वह स्वर्ग होगा, तू जानेगा की प्रकृति, हर वस्तु के समान, हर स्थान पर सादृश है। (ए फ़ेब्रे डी आलूइवेट, द गोल्डेन वर्सेस ऑफ पाइथा गोरस न्यूयार्क 1917)

भारत की मौखिक परम्परा में पर्यावरण को एक ऐसे जीव के रूप में कल्पना की गई है जो सांस लेता है, अनुभव करता है और सुरक्षा प्रदान करता है, आदि। पर्यावरण हमारा मित्र है। पर्यावरण के विभिन्न घटकों को विशेष स्थान दिया गया है इसका अर्थ है कि पर्यावरणीय शक्तियों के प्रति नम्र रवैया अपनाया गया है। अक्सर इस रवैये को धार्मिक अनुष्ठान का रूप दे दिया जाता था।

भारत की मौखिक परम्परा में कथा का विशेष महत्व है और इसमें ज्यादातर कथाएं पशु-पक्षियों से जुड़ी हैं। पशुओं की बहुत सी विशेषताओं की पहचान की गई है और उन्हें इस प्रकार उपयोग में लाया गया है जैसे वे प्राकृतिक विशेषताएं हों। कई कहानियों में वनस्पतियों का भी उल्लेख किया हुआ है। यह बात सदैव ध्यान रखी गई है कि मानव अस्तित्व केवल वनस्पति समूह के द्वारा ही संभव है। धार्मिक ग्रथों द्वारा यह भी पता चलता है कि विभिन्न अवसरों पर अलग-अलग पशुओं और वनस्पतियों की पूजा उनके अस्तित्व की रक्षा की लिए के जाती थी।

मौखिक परम्परा में पारिस्थितिकी मानव प्रकृति को एक ऐसे सत्य के रूप में देखता है जिसका वह प्रत्येक स्तर पर अविभाज्य अंश है। मौखिक देव कथाओं में, मनुष्य की उत्पति का विशेष स्थान नहीं दिया गया है। उसे अपने आप ज्ञान भी नहीं मिला। सामान्यत: मौखिक परम्परा के अनुसार ज्ञान पशुओं और पक्षियों से मिला। प्रकृति प्रेमी मानव ने पूरी सृष्टि के बाद जन्म लिया। वह ज्ञान का सृष्टा नहीं है। ब्रह्माण्डीय बुद्धिमता ज्ञान का स्वत: विद्यमान स्रोत है।

प्राचीन भारतवासियों की मौखिक परम्परा और ज्ञान के अनुसार पृथ्वी दो आधे भागों में विभाजित थी। आकाश और पृथ्वी। आकाश से परे एक दुनिया और भी थी और एक दूसरी पृथ्वी के नीचे। पाँचो तत्व दोनों एक दूसरे को रचना की दृष्टि से ढके हुए हैं। इसी प्रकार की रचनाएं दूसरे विश्व में भी हैं इससे स्पष्ट होता है कि मानव जीवन के जैविक और सामाजिक पक्ष प्राचीन भारतीय मौखिक परम्परा में किस प्रकार पर्यावरण के समग्र दर्शन में शामिल किए गए थे।

7.4 दार्शनिक ग्रथों में पर्यावरण

पश्चिमी धर्मो और नैतिक है परम्पराओं की पर्यावरण के विषय में केंद्रीय स्थिति अधिकतर निरंकुश एवं मानव केंद्रित रही है। अत: हर चीज की सृष्टि जो प्रकृति में मौजूद है मानव जाति के लिए की गई है। मानव जाति के व्यवहार पर कोई नैतिक प्रतिबंध नहीं है।

भारतीय लिखित परम्परा पर्यावरण की कल्पना एक व्यवस्था के रूप में करती जिसने अनेक जैविक और अजैविक तत्वों के जटिल अन्त: संबंधों में तालमेल स्थापित कर लिया है। अजैविक संसार की कल्पना भी ऐसे प्राणी से की गई है जिसमें आत्मा का निवास है। यह एक बहुत महत्वपूर्ण धारणा थी क्योंकि इसमें मानव के दूसरे तत्वों के समान रखा गया है। भारतवासियों के इस दृष्टिकोण से यह स्पष्ट होता है कि विश्व समस्त तत्वों के मध्य स्नेहपूर्ण संबंध है। अपने पर्यावरण के विभिन्न घटकों के महत्व को स्पष्ट करने के लिए बहुत से अनुष्ठान बनाए गए। इन अनुष्ठानों ने यह सुनिश्चित कर दिया कि हम अजैविक विश्व का भी ध्यान रखते हैं और उनसे समन्वय बनाए रखते हैं। उदाहरणार्थ अग्नि को ईश्वर का दूत माना जाता है।

पृथ्वी को मातृ देवी समझा जाता है। आकाश की पूजा पिता के रूप में की गई है। पृथ्वी पूजन शीला पूजन के रूप में भी प्रचलित है। भारतीय दार्शनिक विचारों में गौर-मानव जीवित संसार को भी महत्व दिया गया है। मानवीकरण की एक सम्पूर्ण परम्परा है जिसमें विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों और पशु जीवों को विशिष्ट स्थान दिया गया है। पशुपति महादेव के पूजन की प्राचीन कथा ऐसा ही एक उदाहरण है।

मानवीकरण ईश्वर, पशु, वनस्पति आदि को मानव रूप में प्रकट करना।

पंचतंत्र की कथाओं में भी जीव जगत को विशेष स्थान प्राप्त है। पशुओं का मानवीकरण किया गया है। पशु-पक्षियों को केवल भाषा ही नहीं वरन मानव की संवेदनशीलता और बुद्धिमता से भी मुक्त किया गया है। इसमें पशु जगत की विशिष्टताओं के माध्यम से समस्याओं को उजागर करके मानव जाति को शिक्षा देने का प्रयास किया गया है। पशुओं की बहुत विशेषताओं की पहचान कर बड़ी सुंदरता के साथ उन्हें इन कथाओं में इस्तेमाल किया गया। गऊ की पूजा की जाती है। वृक्षों को पूजा जाता है। विभिन्न पशु-पक्षियों को अलग-अलग देवी और देवताओं का वाहन बनाया गया ताकि इनकी उपयोगिता और उनकी स्थिति उजागर की जा सके और उनकी रक्षा की जा सके।

एक क्षीण पश्चिमी परम्परा है जो टियूवर्ड शिप ट्रेडीशन कहलाती है। इसके अनुसार पृथ्वी की देख रेख की जिम्मेवारी मानवता पर है और वह ईश्वर के प्रति उत्तरदायी है।

भारतीय दर्शन में अनेक वनस्पतियों और जीवों की प्रजातियां और पर्यावरण में मानव के साथ उनके विशेष स्थान को भी उजागर किया गया है। सम्पूर्णता का वह विचार भारतीय दर्शन की एक महान उपलब्धि है।

बोध प्रश्न 1

1) मौखिक परम्परा में मानव और प्रकृति के मध्य संबंधों को कैसे समझा गया है ?

.....

.....

.....

.....

.....

2) प्रकृति की दार्शनिक व्याख्या से आप क्या समझते हैं ?

.....

.....

.....

.....

.....

7.5 पर्यावरण और शास्त्रीय कला

भारतीय परम्परा के अनुसार 'कला' तीन सामसिक पक्षों से मिलकर बनी है। ये सब एक दूसरे के अनुपूरक हैं और एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। प्राथमिकता के अनुसार क्रम निम्नवत है :

- प्रथम स्थान प्रतिभा या उत्प्रेरित दृष्टि का है,
- दूसरे स्थान पर व्युत्पन्न, या कवि के अध्ययन के साधन, और
- अंतिम, अभ्यास या प्राविधि का परिश्रमपूर्ण अभ्यास, या कला विशेष से सम्बद्ध किसी गुरू के मार्गदर्शन में हस्तकारी या तकनीक का अभ्यास।

आचार्यों ने व्युत्पन्न की व्याख्या करते समय पर्यावरण पर विचार किया है। उन्होंने इसके लिए लोक शब्द का प्रयोग किया है जिसका अर्थ है जैविक और अजैविक अस्तित्व का वैविध्यपूर्ण असीम संसार।

भारतीय दर्शन में सामान्य रूप से विश्वास किया जाता है कि प्रत्येक रचनात्मक कार्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रकृति के सम्पर्क में आने से सम्पन्न होता है। प्रकृतिक सौंदर्य को देखकर कलात्मक अभिव्यक्ति की भाषा निर्मित होती है। यहां तक कि प्रकृति में छोटे से छोटा अंकुर कलाकार के उल्लास का प्रेरणा स्रोत बन जाता है। प्रकृति में किसी वस्तु को व्यर्थ नहीं समझा जाता। कला, व्यक्ति, परिवार, गाँव और इस प्रकार सम्पूर्ण पर्यावरण का जीवित अंश बन जाता है।

शिव का नृत्य पारिस्थितिकी की सम्पूर्ण व्याख्या है। **अग्नि** और **मृग** उनके प्रतीक हैं। वन उनकी लटें हैं, स्वयं **गंगा** (जल) उनमें समाहित हैं। सूर्य और चंद्र उनकी जटाओं की शोभा बढ़ाते हैं। साँप उनकी मालाएँ हैं। बाघ की खाल उनका परिधान है। वे अपने डमरू की ब्रह्माणीय लय से सृष्टि की अविराम चक्रीय प्रक्रिया, अध:पतन; पुनरूद्धार और अंतत: इस संसार में ज्ञानोदय लाते हैं। शक्ति उनकी ऊर्जा है जिनके बिना वे अपूर्ण हैं। वे स्वयं जो हिमालय की पुत्री हैं जो तप और संयम की प्रतिमूर्ति हैं। यहां पर्यावरण से एकात्मकता के साथ अनुशासन और संयम पर भी बल दिया गया है।

7.6 दर्शन और संस्कृति : पर्यावरणीय अनुकूलन

किसी ऐतिहासिक या दार्शनिक विवाद में न पड़ते हुए यह कहा जा सकता है कि एक सिद्धांत ऐसा है जो भारतीय दर्शन में एकता, दृष्टि में निरंतरता और प्रत्यक्ष ज्ञान को सुनिश्चित करता है और वह सिद्धांत है कि मनुष्य पूरी सृष्टि का एक अंश मात्र ही है। मनुष्य का जीवन उन सारी चीजों पर निर्भर है जो उसे चारों तरफ से घेरे हुए हैं जैसे निर्जीव खनिज और सजीव जलीय, वनस्पतिक और गैसीय जीवन। ये सारी चीजें उसका पोषण करती हैं अत: मनुष्य का यह कर्तव्य है कि वह स्वयं को निरंतर पर्यावरण और पारिस्थितिकी की याद दिलाता रहे।

भारतीय दर्शन या विश्व की अन्य प्राचीन सभ्यताओं एवं संस्कृतियों के अनुसार पृथ्वी पर जीवन का आरंभ उस शाश्वत जलीय जीवन से प्रकट होता है जो अग्नि की शक्ति पर नियंत्रण रखता है। कदाचित हमने इस पुराण कथा पर विचार नहीं किया है, ऊपर से तो यह स्वप्न जैसा कल्पित लगता है किंतु इसका अर्थ और महत्व उसके द्वारा बताए गए प्रकृति संबंधी तथ्य में निहित है। भारतीय विज्ञान और दर्शन और इसी प्रकार संस्कृति भी सृजन की निरंतर गति ब्रह्माण्ड अद्य:पतन एवं पुनर्जीवन की अभिधारणा के विकास पर आधारित है

समस्त परम्परागत समाजों की रचना चार स्तरीय नियंत्रण व्यवस्था पर आधारित है जो मानव जीवन, उसके अस्तित्व और आकांक्षाओं को अनुशासित करती है। जीवन चार क्रमिक चरणों (आश्रमों) बह्मचर्य, गृहस्थ्य, संन्यासी और वानप्रस्थ में विभाजित है। हालांकि ऊपरी तौर पर अपनी प्रकृति में वे एक दूसरे से अलग हैं फिर भी इनमें आपसी आदान-प्रदान चलता रहता है और ये एक दूसरे को शक्ति प्रदान करती हैं। जीवन का चार स्तरीय अनुशासन पुरुशार्थ कहलाता है, अर्थात एक सांस्कृतिक व्यक्ति पुरुष का निर्माण। चेतना के उच्चतर स्तर पर यह सांस्कृतिक व्यक्ति ब्रह्माण्डीय व्यक्ति (पूर्ण) में रूपांतरित हो जाता है।

बोध प्रश्न 2

1) पर्यावरण और सृष्टि सर्जनात्मक के मध्य अंतर को स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) परम्परागत भारतीय जीवन शैली को स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

7.7 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद हम जान गए हैं कि भारतीय दार्शनिक परम्पराओं में पर्यावरणीय समस्याओं के विस्तारण हेतु उचित व्यवस्था उपलब्ध है।

सारांश के रूप में हम यह कह सकते हैं कि मानव प्रकृति पदार्थों, प्राणियों एवं वनस्पति जगत से जुड़ा हुआ है। जिस पर्यावरण में वह रहता है, वह कोई पराया पर्यावरण नहीं होता। वह सदैव उसे अपना समझता है, जहां वह औरों की तरह सांस लेता है किंतु उन्हें औरों से भिन्न अभिव्यक्ति और वाणी की विशिष्ट क्षमता प्राप्त है। वास्तव में मानव को हमेशा से पदार्थों, प्रकृति की शक्तियों का मूर्तरूप माना गया है और पशु तथा वनस्पति जीवन से उसका संबंध स्थापित किया जाता रहा है। इससे निरंतर विकासमान आधुनिक दुनिया को देखने का एक नया दृष्टिकोण प्राप्त होता है।

7.8 शब्दावली

ब्रह्माण्ड : विश्व (ब्रह्माण्ड) एक अनुशासित समष्टि

ब्रह्माण्डीय केंद्रक : विश्व के केंद्रीय सत्य के रूप में

संकेंद्रीय : मानव और पारिस्थितिकी जीवन के केंद्रीय सत्य के रूप में

7.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) मौखिक परम्परा स्पष्ट करती है कि मानव प्रकृति का एक भाग है। वह अपने पर्यावरण के साथ भागीदारी करता है। वह अपने पर्यावरण का सृष्टिकर्ता है और मृत्यु के बाद पर्यावरण में विलीन हो जाएगा।

2) दार्शनिक स्पष्टीकरण के अनुसार प्रकृति की रचना पाँच मूल तत्वों से हुई है। उसके अनुसार मनुष्य और प्रकृति सकेंद्रीय हैं अर्थात उनकी सृष्टि एक ही पदार्थ से हुई है। वह यह भी उजागर करता है कि प्रकृति मूलरूप से इंद्रियातीत है।

बोध प्रश्न 2

1) पर्यावरण और सृष्टि के मध्य बहुत गहरा संबंध है। सृष्टि का अर्थ है किसी चीज की रचना को पुनः परिभाषित करना। भाग 7.5 देखिए।

2) परम्परागत भारतीय जीवन शैली मानव और प्रकृति के सह अस्तित्व को महत्व देती है। वह सम्पूर्ण अस्तित्व का एक अंश मात्र है जिसमें चिंतन क्षमता भी है।

इस खंड के लिए कुछ उपयोगी पुस्तकें

आर. कर्सन : **द सी एराउण्ड अस**, ओ यू पी न्यूयार्क ,1951

आर. कर्सन : **साईलेंट स्प्रिंग**, हाउटन मिफलिन, न्यूयार्क 1962

आर. मैश : **द राईट्स ऑफ नेचर**, यूनिवर्सिटी ऑफ विस्कान्सिन प्रेस, मेडिसन, 1989

माधव गाडगिल और पी, रामचंद्र गुहा : **द फीशर्स लैण्ड, ऐन इकॉलॉजिकल हिस्ट्री, ऑफ इंडिया**, ओ यू दिल्ली, 992

विद्यानिवास मिश्र (संपादित) : **क्रीएटिविटी एण्ड इन्वायरॅनमेंट**, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली,1992

वेरनेस वुल्फगैंग(संपादित) : **ऑस्पेक्ट्स ऑफ इकॉलॉजिकल प्राब्लेम्स एण्ड इन्वायरमेंट अवेयरनेस इन साउथ एशिया**, नई दिल्ली, 1993

इस खंड के लिए अभ्यास

अभ्यास-1

स्थानीय पुस्तकालय जाइए या अपने क्षेत्र के वयोवृद्ध व्यक्तियों से भेंट कीजिए जो प्रकृति का गुणगान करते हैं, प्रत्येक के विषय में उनका अर्थ समझाते हुए एक एक पैराग्राफ लिखिए।

अभ्यास-2

अभ्यास 1 की तरह प्रकृति का पर्यावरण से सम्बद्ध लोक कथाओं को संग्रहित कीजिए और इनमें से किन्हीं दो का हिंदी/अंग्रेजी में अनुवाद कीजिए।

अभ्यास-3

प्रकृति और पशुओं की पूजा पर आधारित स्थानीय रीति रिवाजों/अनुष्ठानों की सूची बनाइए।